8

प्रार्थना के द्वारा आराधना

प्रार्थना एक ढंग है, जिसके द्वारा हम परमेश्वर के साथ निकट सम्बन्ध बना सकते हैं, प्रार्थना में हम अपने मन की भावनाओं को व्यक्त करते और अपने मनों को खोलते हैं। प्रार्थना के द्वारा बात करते हुए हम परमेश्वर की उपस्थिति में प्रवेश करते और अपने दिल की बात यानी सांसारिक से लेकर अपने जीवन के सबसे महत्वपूर्ण पहलुओं को परमेश्वर के सामने लाते हैं। हमारी प्रार्थनाओं में ''हर बात'' शामिल हो सकती है, क्योंकि परमेश्वर की नज़र में कुछ भी बात इतनी छोटी नहीं है (फिलिप्पियों 4:6)।

हमारी अधिकतर प्रार्थनाएं शायद परमेश्वर के लिए विनतियां ही होती हैं। प्रार्थना का ऐसा तरीका बहुत ही सीमित है। हमारी प्रार्थनाओं धन्यवाद, स्तूति और बहुत सी दूसरी बातें होनी चाहिए जो हम उसे बताना चाहते हैं। इसकी विषय वस्तु असीमित है। परमेश्वर हमारे जीवन की हर बात का ध्यान रखता है चाहे वे हमारी सफलताएं, असफलताएं, परेशानियां या आनन्द हो।

जब हम प्रार्थना करते हैं तो हमें इन चीज़ों की समझ होनी चाहिए:

1. परमेश्वर हमें अपनी उपस्थिति में अपने साथ बात करने के लिए बुलाने को तैयार है (मत्ती 7:7; इब्रानियों 4:16)।

2. आत्मा हमारी सहायता करता है (रोमियों 8:26, 27)।

3. परमेश्वर सर्वशक्तिमान है और हमारी बिनतियों का उत्तर देने में सक्षम है (इफिसियों 3:20)।

4. अपनी मन की भावनाओं, इच्छाओं और प्रार्थनाओं को परमेश्वर के सामने व्यक्त करना हमारी ज़रूरत है (फिलिप्पियों 4:6)।

5. अपनी प्रतिदिन की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए हम परमेश्वर पर निर्भर हैं (फिलिप्पियों 4:19)।

6. हमें बिल्कुल स्पष्ट होने की आवश्यकता है, क्योंकि परमेश्वर के सामने सब कुछ खुला है (फिलिप्पियों 4:13)।

7. हम सर्वशक्तिमान के सामने अयोग्य हैं, तौ भी वह हमें समर्पण के द्वारा स्वीकार करता है (इब्रानियों 4:14, 15)।

8. परमेश्वर सुनने और उत्तर देने को तैयार है (1 पतरस 3:12)।

उससे स्वीकार योग्य प्रार्थना करने वाले वे लोग हैं, जो उसे जानते हैं और जो परमेश्वर के साथ निकट सम्बन्ध के कारण प्रार्थना करते हैं। प्रार्थना करना सीखना परमेश्वर को जानना है। जब हम उसे जानने लगते हैं, तो हमें उसके साथ बात करने और अपनी बात उससे कहने की बेहतर समझ आ जाएगी। हम कभी अपनी मन की भावनाओं को सही ढंग से व्यक्त नहीं कर सकते, प्रभु हमारी सहायता करता है। पवित्र आत्मा हमारे कमज़ोर प्रयासों को लेकर परमेश्वर के समझ आने वाले

ढंग में उन्हें पेश करता है (रोमियों 8:26, 27)।

बाइबल के विषय के रूप में प्रार्थना

प्रार्थना बाइबल के महान विषयों में एक है। पुराने नियम में इस्तेमाल किए गए कुछ प्रमुख शब्द इब्रानी क्रिया *palal* (प्रार्थना) और संज्ञा *tephillah* (''प्रार्थना'') हैं। एक और इब्रानी क्रिया *nah* का अर्थ ''हार्दिक प्रार्थना'' है का अनुवाद ''भीख'' या ''प्रार्थना'' किया जाता है। नये नियम में हमें यूनानी क्रिया *proseuchomai* (''प्रार्थना'') और संज्ञा *proseuche* (''प्रार्थना'') मिलता है।

इनमें से कम से कम एक शब्द पुराने नियम की उन्तालीस में से अठारह को छोड़कर सब पुस्तकों में और नये नियम की सताइस में से आठ पुस्तकों को छोड़ सब में किया गया है। अन्य पुस्तकों में से अधिकतर में चाहे ''प्रार्थना और प्रार्थना करना'' शब्दों का इस्तेमाल नहीं है पर उनकी अवधारणा है। परमेश्वर ने इस्राएलियों से ''मांगने'' के लिए कहा (यहेजकेल 36:37)। जकर्याह ने वर्षा के लिए परमेश्वर से कहने के लिए कहा (जकर्याह 10:1)। यूहन्ना ने बार-बार ''मांगना'' शब्द का इस्तेमाल किया जिसका अर्थ ''प्रार्थना करना'' है (यूहन्ना 14:13, 14, 16; 15:7, 16; 16:23, 24, 26; 1 यूहन्ना 3:22; 5:14-16)।

यीशु की प्रार्थनाएं

यीशु के जीवन की प्रसिद्ध बातों में से एक प्रार्थना पर उसका समय देना था। सुसमाचार के अन्य वृत्तांतों की तुलना में लूका ने उसकी प्रार्थनाओं का उल्लेख है। यीशु द्वारा की जाने वाली प्रार्थनाओं के स=ाह लिखित समयों का निष्कर्ष इस प्रकार है:

> उन्हें चार समूहों में बांटा जा सकता है। (1) उसके जीवन के निर्णायक के समय की प्रार्थनाएं। (क) उसका बपतिस्मा (लूका 3:21), (ख) प्रेरितों की पसन्द (6:12, 13), (ग) उसके मसीहा होने के बारे में उलझन (9:18), (घ) उसका रूपांतर (आयत 9:29) (ङ) गतसमनी में क्रूस से पहले (22:39, 40) और (न) क्रूस पर (23:46)। (2) उसकी सेवकाई के दौरान प्रार्थनाएं: (क) यहूदी अगुओं के साथ झगड़े से पहले (5:16), (ख) ''प्रभु भोज'' देने से पहले (11:1), (ग) जब यूनानी उसके पास आए (यूहन्ना 12:7, 8) और (घ) पांच हज़ार को खिलाने के बाद (मरकुस 6:46)। (3) उसके आश्चर्यकर्मों के समय प्रार्थनाएं: (क), भीड़ के लोगों को चंगा करना (1:35), (ख) पांच हज़ार को खिलाने से पहले (6:41), (ग) गूंगे और बहरे को चंगा करना (7:34) और (घ) लाज़र को मरे हुओं में से जिलाना (यूहन्ना 11:41)। (4) दूसरों के लिए प्रार्थनाएं: (क) ग्यारह के लिए (17:6-19), (ख) पूरी कलीसिया के लिए (17:20-26), (ग) उनके लिए जिन्होंने उसे क्रूस पर चढ़ाया (लूका 23:34) और पतरस के लिए (22:32)।[1]

बेशक यीशु ने दूसरों के लिए प्रार्थना की, अपनी प्रार्थनाओं में उसने अपने आपको भी शामिल

किया (यूहन्ना 17:1-26)।

परमेश्वर के साथ संवाद करना उसके लिए आवश्यक था। "उसने अपनी देह में रहने के दिनों में ऊंचे शब्द से पुकार पुकारकर, और आंसू बहा बहाकर उससे जो उस को मृत्यु से बचा सकता था, प्रार्थनाएं और बिनती की और भक्ति के कारण उस की सुनी गई" (इब्रानियों 5:7)। प्रेरितों का चयन करने से पहले उसने रात भर पिता से प्रार्थना की (लूका 6:12-16)।

वह स्वर्गीय घर से दूर और स्वर्गीय पिता से अलग किया हुआ था। स्पष्टतया उसे पिता की निजी उपस्थिति की निकटता की कमी महसूस होती थी और वह बार-बार उससे बात करना चाहता था। वह हम से कहीं अधिक परमेश्वर की उपस्थिति को मजबूत कर सकता था, पर प्रार्थना का उसका जीवन हमारे लिए उदाहरण है।

प्रार्थना के बारे में यीशु की शिक्षा

न केवल यीशु ने प्रार्थना की बल्कि उसने प्रार्थना के बारे में बड़े अच्छे सबक भी बताए। जब यीशु प्रार्थना कर रहा था तो चेलों में से एक ने उससे कहा कि जैसे यूहन्ना ने अपने चेलों को प्रार्थना करना सिखाया है वैसे वह भी उन्हें प्रार्थना करना सिखाए। उनका बार-बार और निष्कपटता से उसे प्रार्थना में देखना उनके लिए यह आदेश मानने का कारण रहा होगा (लूका 11:1)। उसकी इस विनती पर यीशु ने वह बताया जिसे आम तौर पर "प्रभु की प्रार्थना" कहा जाता है (लूका 11:2-4; मत्ती 6:9-13 भी देखें)। एक बेहतर शीर्षक "आदर्श प्रार्थना" हो सकता है।

यह प्रार्थना सीधी और स्पष्ट है। यीशु ने अपने चेलों को बताया कि उस राज्य के आने के लिए प्रार्थना करते हुए जो थोड़ी देर बाद स्थापित हो जाना था वे सम्मान और याचना के साथ पिता से बात करें (मत्ती 4:17; मरकुस 1:15; 9:1)। उसने उन्हें प्रतिदिन की रोटी, क्षमा, क्षमा करने वाला मन, परीक्षा के समय में सहायता और बुराई से बचने के लिए प्रार्थना करने को कहा।

इस प्रार्थना की सुन्दरता यह है कि यह बिना विस्तृत व्याख्या के मनुष्य की मूल आवश्यकताओं को व्यक्त करती है। इसे अपने आप में पूर्ण प्रार्थना मानने की आवश्यकता नहीं है। यीशु ने यह नहीं कहा कि "यह प्रार्थना करो।" बल्कि कहा, "इस रीति" (मत्ती 6:9) या "ढंग" (KJV) से प्रार्थना किया करो। यीशु ने उन्हें सादगी के नमूने के रूप में प्रार्थना दी जो हमारी प्रार्थनाओं की विशेषता होनी चाहिए।

यीशु रात-रात भर पिता से प्रार्थना करते हुए याद की हुई प्रार्थना बोलता नहीं था (लूका 6:12)। "प्रभु की प्रार्थना" में दिए गए विचारों में कोई भी यीशु की सबसे लम्बी लिखित प्रार्थना में नहीं है। उस प्रार्थना में (यूहन्ना 17:1-26) वह अपने बारे में, अपने अनुयायियों के बारे में और अपने परिवर्तितों के बारे में पिता से बहुत स्पष्ट था। बेशक इसके शब्द "आदर्श प्रार्थना" वाले ही नहीं हैं, पर यह प्रार्थना विशेष परिस्थिति के लिए प्रार्थना कर के उद्धार के लिए काम आ सकती है।

यीशु ने सिखाया कि हमें प्रार्थना करते समय दूसरों को प्रभावित करने के लिए दिखावटी आडम्बर नहीं करना चाहिए। हमें अपनी निजी प्रार्थनाएं एकांत समय में और सादगी भरे ढंग से (मत्ती 6:5, 6) न कि कई शब्द दोहराकर उनका इस्तेमाल करते हुए (मत्ती 6:7)। मुंह बिगाड़ बिगाड़कर, पवित्र होने का दिखावा करके और बाहें हिला हिलाकर संगीत की धुन में पवित्रता दिखाकर लोगों को प्रभावित किया जा सकता है, पर परमेश्वर को नहीं। उसे न तो इस तरह

प्रभावित होने की आवश्यकता है और न वह प्रभावित हो सकता है। हमें अपनी मानवीय निर्भरता और आवश्यकता के समयों में उसकी सहायता पर अपनी निर्भरता को समझने की आवश्यकता है (इब्रानियों 4:16)। उस पर हमारी निर्भरता और उस में हमारा विश्वास ही वे खूबियां हैं, जिन्हें देखकर वह प्रसन्न होता है (मत्ती 8:10; 15:28)।

यीशु ने कहा कि हमें पाने के लिए मांगना आवश्यक है (मत्ती 7:7)। परमेश्वर हमें वैसे ही जवाब देगा जैसे रोटी की ज़रूरत पढ़ने पर कोई दोस्त जवाब देता है, चाहे उसके पास आधी रात को चले जाएं (लूका 11:5-13)।

हमें क्षमा के लिए भी प्रार्थना करनी आवश्यक है। जो दीनता से क्षमा मांगने वाले परमेश्वर की संतान हैं, वे धर्मी ठहराए जाएंगे, न कि वे लोग जो अपने आपको दूसरों से बेहतर समझते हैं (लूका 18:9-14)। यीशु ने एक आदमी का दृष्टांत बताया जिसने बहुत बढ़ा ऋण क्षमा किए जाने के बाद एक साथी से छोटा सा ऋण ऐसे वापस मांगा जैसे वह उसे क्षमा न करना चाहता हो (मत्ती 18:21-35)। इस प्रकार उसने दिखाया कि यदि हम क्षमा किए जाने की उम्मीद करते हैं तो हमें दूसरों को क्षमा करना सीखना आवश्यक है।

यीशु की महान शिक्षाओं में से एक यह है कि "प्रार्थना करते रहें और हिम्मत न छोड़ें।" इसे समझाने के लिए उसने एक विधवा की कहानी बताई, जिसे उसके एक अन्ययायी जज के पास बार-बार जाने के कारण सहायता मिली (लूका 18:1-8)।

अपनी आने वाली मृत्यु के कारण अत्यधिक संताप में भी यीशु ने अपने चेलों को जागते रहकर प्रार्थना करने के लिए कहा था (मत्ती 26:41)। प्रार्थना उनकी स्थिति के लिए आवश्यक थी, पर यह अपने आप में काफी नहीं थी क्योंकि उन्हें जागना भी आवश्यक था। प्रार्थना के समय "खटखटाना" और "ढूंढ़ना" भी हमारी ज़िम्मेदारियों से छुड़ा नहीं देती (मत्ती 7:7, 8)। बेशक हमें बुद्धि के लिए मांगना आवश्यक है (याकूब 1:5), पर बुद्धि पाने के लिए हमें इसे पाने के लिए अच्छी सलाह लेते हुए (नीतिवचन 13:10ख) अपना योगदान देना भी आवश्यक है (नीतिवचन 4:5, 7; 23:23)। अपनी प्रार्थनाओं का उत्तर पाने के लिए यानी जो कुछ हम नहीं कर सकते उसके लिए परमेश्वर पर निर्भर रहते हुए अपना योगदान देना चाहिए। इस विचार में एक पुरानी कहावत मिलती है कि "ऐसे प्रार्थना करें जैसे उत्तर देने का काम परमेश्वर का ही है, और ऐसे काम करें जैसे उत्तर आप पर ही निर्भर है।"

आरम्भिक कलीसिया की प्रार्थनाएं

प्रेरितों की काम की पुस्तक के अनुसार प्रार्थना आरम्भिक कलीसिया की गतिविधियों में अध्ययन का ही एक भाग था। सदस्य मिलकर और अकेले में प्रार्थना करते थे। परमेश्वर पर उनकी निर्भरता और उसके सामने की गई उनकी विनतियों के कारण वह उन्हें सहायता देने और सामर्थ के द्वारा काम करके उत्तर देता था। आरम्भिक कलीसिया की लगातार प्रार्थना कलीसिया के इतनी तेजी से बढ़ने के कारणों में से एक हो सकता है। लूका ने प्रेरितों के काम पुस्तक में निम्न प्रार्थनाओं का उल्लेख किया है:

1. नवजन्मी कलीसिया प्रार्थना में बनी रही (प्रेरितों 2:42)।
2. पतरस और यूहन्ना को यीशु के नाम में कुछ भी न बोलने का आदेश मिलने के बाद वे

चेलों के पास लौट गए। मण्डली प्रार्थना में परमेश्वर की ओर देखती थी (प्रेरितों 4:24-31)।

3. प्रेरितों ने परोपकार की जिम्मेदारी दूसरों को दे दी ताकि वे प्रार्थना में और वचन की सेवकाई में समय दे सकें (प्रेरितों 6:4)।

4. ज़रूरतमंद विधवाओं की देखभाल के लिए चुने जाने वाले सात पुरुषों को ठहराने से पहले प्रेरितों ने प्रार्थना की (प्रेरितों 6:6)।

5. पथराव करके मारे जाने के समय स्तिफनुस यीशु से प्रार्थना कर रहा था (प्रेरितों 7:59, 60)।

6. सामरिया में मसीही लोगों पर हाथ रखने से पहले पतरस और यूहन्ना ने प्रार्थना की कि उन्हें पवित्र आत्मा मिल सके (प्रेरितों 8:15)।

7. शमौन को प्रार्थना करने के लिए कहा गया, जिससे उसे क्षमा मिल सके (प्रेरितों 8:22) और उसने पतरस और यूहन्ना को उसके लिए प्रार्थना करने के लिए कहा (प्रेरितों 8:24)।

8. दोरकास का प्राण वापस लाने से पहले पतरस ने प्रार्थना की (प्रेरितों 9:40)।

9. खाने की प्रतीक्षा करते याफा में पतरस घर की छत पर प्रार्थना कर रहा था (प्रेरितों 10:9; 11:5)।

10. जब पतरस कैद में था तब कलीसिया ने उसके लिए प्रार्थना की (प्रेरितों 12:5, 12)।

11. पौलुस और बरनबास को उनकी पहली मिशनरी यात्रा में भेजने से पहले प्रार्थनाएं की गई थीं (प्रेरितों 13:3)।

12. पौलुस और बरनबास ने प्रार्थना करने के बाद प्राचीन को नियुक्त किया (प्रेरितों 14:23)।

13. फिलिप्पी की जेल में पौलुस और सीलास आधी रात को प्रार्थना कर रहे थे (प्रेरितों 16:25)।

14. पौलुस द्वारा इफिसुस के प्राचीनों को अलविदा करने पर सबने घुटने टेककर प्रार्थना की (प्रेरितों 20:36)।

15. पौलुस के तोर से विदा होने पर तट पर प्रार्थनाएं की गईं (प्रेरितों 21:5)।

16. पौलुस ने मन्दिर में अपने आपको शुद्ध करते हुए, प्रार्थना की (प्रेरितों 22:17)।

17. पौलुस ने उबलियुस के पिता को चंगा करने से पहले प्रार्थना की (प्रेरितों 28:8)।

प्रार्थना पर पौलुस की शिक्षा

प्रेरितों के काम पुस्तक से हमें पता चलता है कि पौलुस अक्सर प्रार्थना करता था, उसके पत्रों से हमें यह समझ आती है कि वह दूसरों के लिए प्रार्थना करता था।[2] दूसरे भी पौलुस के लिए प्रार्थना करते थे।[3]

पौलुस ने मसीही लोगों को ''निरन्तर प्रार्थना में लगे'' रहने (1 थिस्सलुनीकियों 5:17) और ''प्रार्थना में नित्य लगे रहने का निर्देश दिया'' (रोमियों 12:12; देखें कुलुस्सियों 4:2)। हमारी प्रार्थनाएं परमेश्वर की स्तुति (रोमियों 15:5, 6) उसकी महिमा, (इफिसियों 1:6, 12), उसका धन्यवाद (फिलिप्पियों 1:3; कुलुस्सियों 1:3), उससे याचना (1 तीमुथियुस 2:1) और उसे धन्यवाद देने के लिए होनी चाहिए (1 पतरस 1:3, 4)।

पौलुस ने फिलिप्पियों को चिंता न करने बल्कि अपनी विनतियां परमेश्वर के सामने लाने को कहा (फिलिप्पियों 4:6)। उसने हाकिमों और अधिकार वालों के सामने निवेदन करने को कहा (1 तीमुथियुस 2:1, 2)। प्रार्थना में सार्वजनिक तौर पर अगुआई की जिम्मेदारी मण्डली के पुरुषों की है। पौलुस ने कहा, ''इसलिए मैं चाहता हूं कि हर जगह पुरुष ... प्रार्थना किया करें'' (1 तीमुथियुस 2:8)। यहां इस्तेमाल यूनानी शब्द *andros* का अर्थ वयस्क मानवीय नर अर्थात आदमी है (मत्ती 15:38; मरकुस 6:20)। यदि संदर्भ से ऐसा संकेत मिलता है तो इसका अर्थ पति है (मत्ती 1:16; मरकुस 10:12)।

इन ''पुरुषों'' को ''हर जगह'' प्रार्थना करनी आवश्यक है (यू.: *en panti topo*) जिसका अर्थ है मसीही लोगों के इकट्ठे होने की हर जगह। ''हर'' के साथ ''जगह'' का इस्तेमाल होने पर इसका सामान्य अर्थ कलीसिया की ''सभाओं की जगहें'' है (1 कुरिन्थियों 1:2; 2 कुरिन्थियों 2:14; 1 थिस्सलुनीकियों 1:8)। इनमें से किसी भी आयत का अर्थ ''पूरे संसार की हर जगह'' नहीं हो सकता। ''जगह'' का अर्थ अपने आप में कई बार सभास्थल है, जैसे मन्दिर (मत्ती 24:15; यूहन्ना 4:20; 11:48; प्रेरितों 6:13; 21:28)।

मण्डली में सार्वजनिक सभाओं में पुरुषों को मुख्य भूमिका निभानी होती थी। स्त्रियां शांत रहती थीं और सभा को सम्बोधित नहीं करती थीं (1 कुरिन्थियों 14:34, 35)। वे खामोशी से निर्देश ग्रहण करती थीं, पुरुषों को सिखाने या पुरुषों के ऊपर अधिकार चलाने के लिए नहीं। स्त्रियों के लिए अधीन रहना आवश्यक था (1 तीमुथियुस 2:11, 12)।

यह निर्देश समाज की संस्कृति पर आधारित नहीं थे। पहली सदी ईस्वी की स्त्रियां मूर्तिपूजक धार्मिक सेवाओं में अगुआई का काम करती थीं। उनके विपरीत मसीही स्त्रियों को सार्वजनिक सभाओं में मुख्य भूमिका नहीं दी जाती थी। यह सृष्टि के परमेश्वर के क्रम और अदन के बाग में स्त्री के आज्ञा न मानने पर आधारित था (1 कुरिन्थियों 11:3, 8, 9; 14:34)। यह सम्भवतया स्त्री को बाग में किए गए उसके अपराध के लिए दिया गया दण्ड था: ''तेरी इच्छा तेरे पति के लिए रहेगी और वह तुझ पर प्रभुता करेगा'' (उत्पत्ति 3:16ख; देखें 1 तीमुथियुस 2:13, 14)।

पुरुष हों या स्त्रियां जो लोग परमेश्वर के क्रम का सम्मान करते हैं वे देखेंगे कि पुरुष प्रार्थनाओं में, सिखाने और मण्डलियों को सम्बोधित करने में और आराधना सेवाओं का प्रबन्ध चलाने में मुख्य भूमिका निभाएं। परमेश्वर का भय मानने वाली स्त्रियां अगुओं के रूप में पुरुषों का सम्मान करेंगी और उनकी बात मानेंगी।

प्रार्थना के लिए निर्देश

कई लोग सोचते हैं कि प्रार्थना में शारीरिक स्थिति का होना अनिवार्य है। एक आदमी ने कहा कि प्रार्थना करते समय खड़े होना गलत है, क्योंकि अपने आपको धर्मी मानने वाला आदमी जिसके बारे में यीशु ने दृष्टांत में बताया, खड़ा होकर ही प्रार्थना कर रहा था (लूका 18:11)। उसने इस बात को नज़रअन्दाज किया कि पश्चात्तापी व्यक्ति जो परमेश्वर की नज़र में धर्मी ठहराया गया था, भी खड़े होकर प्रार्थना कर रहा था (18:13; मरकुस 11:25 भी देखें)। प्रार्थना में अलग-अलग शारीरिक स्थितियां मानी जाती थीं। यीशु, स्तिफनुस और पतरस ने प्रार्थना के लिए घुटने टेके (लूका 22:41; प्रेरितों 7:60; 9:40)। यीशु प्रार्थना करने के लिए मुंह के बल गिर गया (मत्ती

26:39; देखें मरकुस 14:35)। महत्व शरीर की स्थिति का नहीं बल्कि मन की स्थिति का है।

पौलुस ने माना, ''हम नहीं जानते कि प्रार्थना किस रीति से करनी चाहिए ...'' (रोमियों 8:26)। आत्मा उन विचारों को लेकर जिन्हें परमेश्वर के सामने व्यक्त करना और पेश करना हमारे लिए कठिन लगता है, हमारी प्रार्थनाओं के लिए सहायता करता है।

प्रार्थना कोई विकल्प नहीं है

बहुत बार हम पमरेश्वर से वह करने के लिए कहते है, जो हमारी अपनी जिम्मेदारी होती है। परमेश्वर ने हमारे लिए सब कुछ करने या हमें हर कठिनाई, असफलता और त्रासदी से बचाने की प्रतिज्ञा नहीं की है। कई बार जीवन की समस्याएं चल रही आशीषों से अधिक मूल्यवान होती हैं (इब्रानियों 12:3-11; याकूब 1:2-4)। भजन संहिता 119 में दाऊद ने लिखा:

> उस से पहिले कि मैं दु:खित हुआ, मैं भटकता था; परन्तु अब मैं तेरे वचन को मानता हूं (आयत 67)।
>
> मुझे जो दु:ख हुआ वह मेरे लिये भला ही हुआ है, जिस से मैं तेरी विधियों को सीख सकूं (आयत 71)।

प्रार्थना उन बातों का जो हमें स्वयं करनी चाहिए या परमेश्वर हमसे करवाना चाहता, है का विकल्प नहीं है।

1. हमें बिना सोचे समझे अपने आपको खतरे में डालकर परमेश्वर से हमें बचाने की प्रार्थना नहीं करनी चाहिए। जब शैतान ने यीशु को मन्दिर के चबूतरे से छलांग लगाने के लिए कहा था तो उसने उत्तर दिया था, ''तू प्रभु अपने परमेश्वर की परीक्षा न कर'' (मत्ती 4:7)।

2. प्रार्थना आज्ञापालन का विकल्प नहीं है। परमेश्वर अपनी आशिषें उन्हीं को देता है, जो उसकी आज्ञाओं को मानते और जो उसकी नज़र में अच्छा है वही करते हैं (1 यूहन्ना 3:22)।

3. जो गैर मसीही अर्थात बचाए हुए नहीं और पाप में खोए हैं, उन्हें प्रार्थना के द्वारा क्षमा नहीं किया जा सकता। यीशु आज्ञापालन की मांग करता था (इब्रानियों 5:9; फिलिप्पियों 2:12 भी देखें)। केवल उन्हीं को जो परमेश्वर की संतान बन गए हैं, क्षमा के लिए प्रार्थना करने को कहा गया था (प्रेरितों 8:22)।

4. प्रार्थना डॉक्टरी सहायता का विकल्प नहीं है। पौलुस ने तीमुथियुस को चंगाई देने के लिए प्रार्थना करने के लिए नहीं कहा। उसने उसे अपने पेट की समस्याओं और बार-बार की कमजोरियों के लिए थोड़ा सा दाखरस ले लेने के लिए कहा (1 तीमुथियुस 5:23)। तीमुथियुस अच्छा होने के लिए जो कुछ भी कर सकता था वही करना था। हमें रोगियों के लिए प्रार्थना करने को कहा गया है। हमें चंगाई के लिए प्रार्थना करने को कहा गया है (याकूब 5:14-16), इसका अर्थ यह नहीं है कि यह इस बात का संकेत है कि चंगा होने के लिए हम जो कुछ कर सकते हैं उसको नज़र अन्दाज कर दें। स्पष्टतया परमेश्वर ने संसार में ऐसी चीज़ें रखीं हैं जिनसे चंगाई मिल सकती है। वह हम से उम्मीद करता है कि हम जो कुछ भी कर सकते हैं, वह करें।

यीशु डॉक्टरों की सेवा लेने के विरुद्ध नहीं है। उसने कहा, ''वैद्य भले चंगों के लिए नहीं

बल्कि बीमारों के लिए आवश्यक है'' (मत्ती 9:12; मरकुस 2:17; देखें लूका 5:31)।

बाइबल में जिन लोगों का नाम है, वे चंगाई के आश्चर्यकर्म केवल प्रार्थना के द्वारा नहीं करते थे। यीशु ने उन्हें चंगाई देने की शक्ति दी (मत्ती 10:1)। आश्चर्यकर्म से मिले दान का इस्तेमाल करने के लिए उन्हें विश्वास और शायद प्रार्थना की भी आवश्यकता थी (मत्ती 17:20, 21)। बाइबल में दर्ज कोई भी आश्चर्यकर्म केवल प्रार्थना और विश्वास के आधार पर नहीं हुआ। किसी को आश्चर्यकर्म करने की शक्ति दी जानी आवश्यक थी, जिसके बाद उस शक्ति का इस्तेमाल करने से पहले उसमें विश्वास होना आवश्यक था। पतरस को पानी पर चलने की शक्ति दी गई थी पर अपने विश्वास की असफलता के कारण वह उस पर नहीं चल पाया (मत्ती 14:31)। दुष्टात्माओं को निकालने की शक्ति मिले होने और पहले उन्हें निकालने के बावजूद प्रेरित दुष्टात्माओं को नहीं निकाल पाया था (मत्ती 10:1; मरकुस 3:15; 6:13)। उनकी यह नाकामी शक्ति की कमी के कारण नहीं बल्कि विश्वास की कमी के कारण थी (मत्ती 17:20)।

प्रार्थना काम का विकल्प नहीं है। हमें अपने प्रतिदिन की रोटी मांगनी आवश्यक है (मरकुस मत्ती 6:11), पर इसका अर्थ यह नहीं है कि हम इसे पाने के लिए कुछ करें न। पौलुस ने लिखा कि हमें काम करना आवश्यक है। ताकि हम दूसरों को देने के योग्य हो जाएं (इफिसियों 4:28)। जो लोग काम नहीं करते उन्हें खाने नहीं दिया जाना चाहिए (2 थिस्सलुनीकियों 3:10)। यीशु ने यह कभी नहीं सिखाया कि हमारा काम केवल पाने के लिए मांगना हो। यीशु ने मांगने के विषय में कहा, ''मांगो तो तुम्हें दिया जाएगा; खटखटाओ तो तुम्हारे लिए खोला जाएगा'' (मत्ती 7:7)। प्रार्थनाओं के साथ-साथ परमेश्वर हमसे हमारा योगदान यानी ''ढूंढ़ने और खटखटाने'' की उम्मीद करता है।

न्यू जर्सी में एक महिला की नौकरी छूट गई, उसने और कहीं आवेदन नहीं किया और नौकरी की तलाश नहीं की। उसे लगता था कि यदि वह यह काम करेगी तो उसकी नई नौकरी उसकी अपनी इच्छा से चुनी हुई होगी न कि परमेश्वर से। एक साल बाद भी वह बिना काम के थी। वह ''ढूंढ़ने'' और ''खटखटाने'' की यीशु की आज्ञा का पालन नहीं कर रही थी।

प्रार्थना के उत्तर

हो सकता है कि हमें कभी पता न चले कि परमेश्वर हमारी प्रार्थनाओं के उत्तर कैसे देता है। पौलुस की रोम में जाने की इच्छा थी (प्रेरितों 19:21)। उसने परमेश्वर से उसे रोम जाने देने की अनुमति मांगी ताकि वह वहां के मसीही और गैर मसीही लोगों के साथ सुसमाचार की आशीषें बांट सके (रोमियों 1:10-14)। परमेश्वर ने अश्दोद में फिलिप्पुस को ले जाने की तरह पौलुस को रोम में जाने की छूट देने के लिए आत्मा का इस्तेमाल नहीं किया (प्रेरितों 8:39, 40)। इसके बजाय परमेश्वर ने रोमी सरकार को पौलुस को मुफ्त में रोम ले जाने के लिए इस्तेमाल करके प्रार्थना का उत्तर दिया (प्रेरितों 27; 28)।

हमारी जिम्मेदारी यह पता लगाना नहीं है कि परमेश्वर प्रार्थना का उत्तर कैसे देता है। हमें उससे यह विश्वास करते हुए कहना है कि वह हमारी प्रार्थनाओं का उत्तर देने के लिए उसके कई उपलब्ध संसाधनों में से किस का इस्तेमाल करे। वह हमारा, दूसरों का प्रकृति का या अन्य साधनों का इस्तेमाल करते हुए उनका उत्तर देता है।

कई बार हम अपनी प्रार्थनाओं के सकारात्मक उत्तर रोक देते हैं। हमारी प्रार्थनाएं ढूंढ़ने, खटखटाने और देखने से नाकाम होकर (मत्ती 7:7, 8; 26:41); संदेहों से (याकूब 1:6, 7); पूछने में हमारी असफलता से (याकूब 4:2ख); गलत उद्देश्यों से (याकूब 4:3) या हमारे गलत जीवन से (1 पतरस 3:7ख, 12) रुक सकती हैं।

परमेश्वर सब प्रार्थनाओं का उत्तर देता है। यानी वह उनका उत्तर अलग-अलग तरह से देता है। "हां" कहकर तुरन्त हमारी विनती मान लेता है (याकूब 5:17, 18)। "एक और उत्तर, ज़ारा रुक जाओ" हो सकता है। हो सकता है कि परमेश्वर यह देखने के लिए कि उस विनती को मानने का समय कौन सा है रुक जाए (1 शमूएल 1:7-17)। बुद्धिमान परमेश्वर होने के कारण वह कई बार "न" कह सकता है (2 कुरिन्थियों 12:7-9)। मत्ती 26:39 में परमेश्वर ने यीशु की प्रार्थना सुनी (देखें इब्रानियों 5:7), पर उसने अपने पुत्र की विनती को माना नहीं। यीशु के लिए क्रूस पर मरना आवश्यक था। परमेश्वर हमें वही देता है, जो हमारे लिए सबसे बेहतर हो।

सारांश

प्रार्थना का उत्तर देने की शक्ति परमेश्वर में है न कि प्रार्थना में। प्रार्थना में परमेश्वर तक पहुंचकर हम संसार की सबसे बड़ी शक्ति से बातचीत कर रहे होते हैं। उसकी इच्छा मानने के साथ-साथ यदि हम उसकी सहायता मांग रहे हैं तो उस बड़ी शक्ति के साथ जुड़ने से हमें सहायता मिलती है। प्रार्थना "मांग" की सूची लेकर परमेश्वर के साथ बात करने से कहीं बढ़कर है। प्रार्थना में हमें परमेश्वर की स्तुति "धन्यवाद और महिमा करनी चाहिए।"

यीशु हमारे लिए नमूना है। वह प्रार्थना करता था क्योंकि वह परमेश्वर के निकट था न कि इसलिए कि वह परमेश्वर के साथ सम्बन्ध बढ़ाना चाहता था। परमेश्वर के साथ हमारी निकटता प्रार्थना के हमारे जीवनों में भी देखी जा सकती है। हमें परमेश्वर को जानने और उसके साथ चलने का प्रयास करना चाहिए। यदि उसके साथ हमारा सम्बन्ध सही है तो हम बार-बार उससे बात करना चाहेंगे।

टिप्पणियां

[1]*दि न्यू इंटरनैशलन डिक्शनरी ऑफ़ द बाइबल,* सं. जे. डी. डगलस एण्ड मैरिल सी. टैनी (ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: रीजेन्सी रैफरेंस लाइब्रेरी, ज़ौंडर्वन पब्लिशिंग कं., 1987), 817 में पीटर टून, "प्रेयर।" [2]रोमियों 1:10; 10:1; 2 कुरिन्थियों 13:7, 9; इफिसियों 1:16; फिलिप्पियों 1:4, 9; कुलुस्सियों 1:3, 9; 1 थिस्सलुनीकियों 1:2; 2 थिस्सलुनीकियों 1:11; 2 तीमुथियुस 1:3; फिलेमोन 4. [3]रोमियों 15:30; 2 कुरिन्थियों 1:11; फिलिप्पियों 1:19; कुलुस्सियों 4:3; 1 थिस्सलुनीकियों 5:25; 2 थिस्सलुनीकियों 3:1; इब्रानियों 13:18.